Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

भक्ति संगीत में अध्यात्म का महत्व

Samita Udey Kolhatkar[1], Dr. Rajesh Kelkar[2], Dr, Kedar Mukadam[3]

1 Research Scholar, Voacal Dept. Faculty of Performing Arts, The Maharaja Siajirav University of Baroda
2 Dept. of Vocal, Faculty of Performing Arts, The Maharaja Siajirao university of Baroda, Barodra
3 Assistant Professor Faculty of Performing Arts, The Maharaja Siajirao university of Baroda, Barodra

शोध सार

संगीत स्वयं ही भक्ति स्वरूप है। जिस प्रकार से भक्ति के अलग–अलग आयाम होते हैं वैसे ही संगीत के भी कई प्रकार होते हैं। भक्ति संगीत का अस्तित्व अध्यात्म से जुड़ा है। भक्ति और संगीत दोनों ही का मुख्य उद्देश्य आत्मानंद की प्राप्ति है। आध्यात्मिक उन्नति के लिए संगीत विषेश रूप से महत्वपूर्ण है। हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत के कई राग ऐसे हैं जिनके 'मूल स्वर' ही 'भक्तिमय' है। जैसे– तोड़ी, भैरव, ललत, भैरवी, चारूकेशी, परमेश्वरी आदि। इन सभी रागों से जनित संगीत में भी भक्ति का भाव अनुभूत होता है। इसके अतिरिक्त हमारे आध्यात्मिक उन्नत संतों ने संगीत के उपयोग से आत्मानंद की प्राप्ति की। केवल भक्तिपूर्ण शब्द ही भक्ति की उत्कटता के लिए पर्याप्त नहीं है। उसमें भाव का होना अत्यंत आवश्यक है।

बीज शब्दः निष्काम भक्ति, भक्ति संगीत, सामवेद, अध्यात्म।

भूमिका

संगीत मनुष्य की एक नैसर्गिक अभिव्यक्ति है। हमारे भारतवर्ष में आज तक बहने वाली संगीत सरिता का मूल 'सामवेद' को माना गया है। श्रीमद् भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण का कथन–''वेदनां सामवेदाऽस्मि'' से हम यह जान सकते है कि संगीत सृष्टि का आदि तत्व है। अर्थात् ''सामवेद'' साक्षात् ईश्वर का स्वरूप है। तद्उपरांत नारद संहिता के अनुसार –

''नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां ह्रदये न वा ।

मदभक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिश्टामि नारदः ।।''[1]

उपरोक्त श्लोक द्वारा भी संगीत की महत्ता सिद्ध होती है।

हमारे वैदिक ग्रंथों में गीत, वाद्य, नृत्य आदि की चर्चा की गई है। परंतु सामवेद मुख्य रूप से गान के लिए ही प्रसिद्ध है। अर्थात् सामवेद गेय है तथा सामगान का प्रमाणभूत तत्व स्वर है। सामगान का प्रारंभ 'ओमकार' से किया जाता है तथा अंत भी इसी स्वर से होता है।[2] उसके अंतर्गत ऋग्वेद की ही सारी ऋचाएं (केवल 75 नई ऋचाएं है) या सूक्तों का गान किया गया है। अतः सामवेद, ऋग्वेद का ही गेय रूपांतर मात्र है। 'स्तुति' यानि 'सोम स्तुति' सामवेद का विषय है अर्थात् 'उदगाता' द्वारा उचित स्वर में किया गया मंत्र गायन। इस प्रकार से भारतीय संगीत का मूल स्त्रोत सामगान ही है यह स्पष्ट होता है। तद्उपरांत भारतीय संगीत शास्त्र के सप्त स्वरों के नाम क्रमशः – क्रुष्ट, प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, मंद, अतिस्वार आदि भी सामवेद से मिलते हैं।[3]

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

संगीत के इस शास्त्रीय पक्ष के उपरांत अनादिकाल से ही हमारे ऋषि–मुनियों ने संगीत को भक्ति एवं ईश्वर प्राप्ति का साधन माना है। आध्यात्मिक साधना के ज्ञानयोग, कर्मयोग, नादयोग, भक्तियोग आदि प्रमुख मार्ग सर्वविदित है और भक्तियोग इसमें सर्वश्रेष्ठ है।

किसी मनुष्य ने ज्ञानयोग अंतर्गत ग्रंथगत ज्ञान को प्राप्त किया एवं कर्मयोग के अनुसार अनेक आपत्तियों को सहन करके जरूरी कर्म भी किया परंतु इसको करते वक्त ईश्वर या कोई परमात्मा के प्रति अगर प्रेम एवं समर्पण का भाव न हो तो वे ज्ञान और कर्म दोनों ही व्यर्थ हो जाते हैं। वैसे तो ज्ञानयोग तथा कर्मयोग में किया गया प्रत्येक कार्य ईश्वरार्थ होता है। पातंजल योगसूत्र में भी ''ईश्वर के प्रति भक्ति से समाधि सिद्धि' की बात कही गई है।[4] अतः किसी भी प्रकार की अध्यात्म साधना में भक्तियोग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

''भक्ति'' शब्द की परिभाषा अनेक संतो एवं विद्वानों ने दी है। व्यक्तिगत रूप से स्वयं के आदर्श के प्रति श्रद्धा रखकर समर्पण भाव से व्यवहार करना भक्ति है। अर्थात् शुद्ध प्रेमभाव से किया गया समर्पण भक्ति है। संगीत के आदि आचार्य देवर्षी नारदजी के अनुसार, ''ईश्वर के प्रति परम अनुराग ही भक्ति है।''[5] ऐसी भक्ति को प्राप्त करके मनुष्य की काम वासनाएं नष्ट होकर वह सिद्ध हो जाता है। नारद भक्तिसूत्र के अनुसार, "भक्ति एवं भक्त का वर्णन करते हुए, नादरजी लिखते हैं कि ऐसा भक्त अपने समस्त कर्म ईश्वर को अर्पण करता है और ईश्वर का विस्मरण होने पर व्याकुल होता है, यही भक्ति है। ऐसी ही भक्ति ब्रज गोपियों में थी। श्रीमद् भागवद महापुराण तथा रामचरितमानस में नवधा भक्ति के अंतर्गत संकीर्तन–ईश्वर गुणगान करने का उल्लेख किया गया है। संगीत के आदि आचार्य नारदमुनि अपने भक्तिसूत्र में कहते हैं कि भगवान के गुण के श्रवण और कीर्तन से भक्ति का साधन सम्पन्न होता है। कीर्तन की परिभाषा में भी संगीत को महत्वपूर्ण अंग के रूप में बताया गया है। जैसे–

''नामलीलागुणदीनामुच्चैर्भाशा तु कीर्तनम्'' [6]

अर्थात् भगवान के नाम, गुण, लीला आदि का उच्च वाणी में पाठ करना कीर्तन कहलाता है। श्रीमद् भगवद में भी नौ प्रकार के गीत हैं जो सभी 'प्रेम भक्ति' का निर्देशन करते हैं।

इस प्रकार से हमारी भारतीय संस्कृति, ऋषि–मुनि, संत परंपरा, अनेक पवित्र धर्मग्रंथ और संगीत जैसे शाश्वत तत्वों से समृद्ध होते हुए भी 6–7 वीं शताब्दी में हमारे वैदिक हिन्दु धर्म में कुछ कमियाँ उभर आयी। परिणामस्वरूप हिन्दु धर्म क्षीण होने लगा और ''जैन'' एवं ''बुद्ध'' जैसे दो नए धर्मो का विस्तार दृष्टिगोचर हुआ। इस परिस्थिति में हिन्दु धर्म की जड़ें मजबूत करने के लिए भारत के विभिन्न प्रांतों से अनेक संत उभर आएं और उन्होंने केवल भक्ति के माध्यम से धर्म की कुरीतियाँ दूर करने का प्रयास किया। यह भक्ति आंदोलन उत्तरोत्तर फैल गया और उसी के परिणामस्वरूप हमारी वैभवशाली भक्ति परंपरा एवं भक्ति संगीत की अनुभूति का सद्भाग्य हमें आज प्राप्त हुआ।

ईश्वरोपासना के लिए की गई प्रार्थना, स्तुति, भजन आदि सभी अनन्य प्रेम से अपने आराध्य में या भगवान में एकरूप होना ही भक्ति है। गोस्वामी तुलसीदासजी के शब्दों में अनन्य भक्ति यानि–

''अर्थ न धर्म न काम रूचि, पद न चहऊँ निरबान ।

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

जनम जनम रति रामपद, यह वरदान न आन ।।''[7]

अर्थात् तुलसीदासजी कहते हैं कि ''मुझे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष किसी में भी रुचि नहीं है परंतु हर एक जन्म में श्रीराम के चरणों में मेरा प्रेम रहे यही वरदान मैं मांगता हूँ।'' यही निष्काम भक्ति है और यही भक्ति साधक को अध्यात्म मार्ग की और उन्मुख करती है। भक्ति से साधक का अंतःकरण पवित्र हो जाता है। छल–कपट से साधक ऊपर उठाने लगता है और ईश्वर क्रिया से आत्मा साक्षात्कार की तरफ आगे बढ़ता है।

ऐसी ही निष्काम भक्ति में प्रेम की अभिव्यक्ति के लिए संगीत अत्यंत प्रभावी माध्यम है। संगीत का प्रभाव विश्वव्यापी है। संगीत के कोई भी स्वरूप को गाते वक्त गायक–कलाकार तो उसके साथ एकरूप हो ही जाता है परंतु संगीत को श्रवण करते वक्त भी मन की सारी वृत्तियाँ अन्य विषयों से हटकर केवल श्रवणेंद्रिय में केंद्रीभूत होती है। इस वाक्य को पुष्टि देने के लिए शोधार्थी पं. भीमसेन जोशी जी का एक प्रसंग उल्लेखित कर रहा है। इंदौर के शनैष्वर मंदिर में पण्डितजी कि 'संतवाणी' का कार्यक्रम था। उस पूरे चौराहे पर काफी भीड़ जमी हुई थी। संतवाणी मराठी भाषा में होने के बावजूद भी एक मराठी जवान फूट–फूट कर रो रहा था। बाद में लेखक ने उसे भेंट करके पूछा तब उसने बताया कि–''पण्डितजी की आवाज़ से ही गदगद हो उठा। मेरे भाव कुछ अतिरिक्त ही जागृत हुए। लेकिन असहय नहीं हुए।''[8] इस प्रकार भक्ति रस उत्पन्न करने वाले शब्द और पण्डितजी की आवाज़ ने श्रोतागण को भी मंत्रमुग्ध कर दिया। अतः मन की एकाग्रता तथा आध्यात्मिक साधना में भी संगीत का प्रयोग मुख्य रूप से किया जाता है।

महर्षि अरबिंदो के कथानुसार–''संगीत एक आध्यात्मिक कला है जो सदैव धार्मिक भावनाओं तथा आंतरिक जीवन से संबंधित रहती है।'' अध्यात्म, धर्म, भक्ति आदि का संबंध मानवी मन के भावों से हैं और संगीत भी मनुष्य के हृदयगत भावों की अभिव्यक्ति है। प्रो. स्वतंत्रबाला शर्मा के अनुसार ''संगीत एक यौगिक विद्या है, जिसकी तीव्र और तीव्रतर ध्वनियां स्नायुओं को झकृंत कर सुषुप्त कुंडलिनी को जाग्रत कर देती है तथा मनुष्य को आत्मानुभूति की चरमसीमा 'मोक्ष' के द्वार तक पहुंचा देती है। हमारे प्राचीन योगियों के अनुसार अध्यात्म मार्ग में 'समाधि' की प्राप्ति परम लक्ष्य है और योग मार्ग द्वारा उसे प्राप्त करने के लिए पातंजल योगसूत्र में अष्टांग योग का विधान है। वैसे ही संगीत साधना करते वक्त जिन स्वरों एवं रागों का अभ्यास करने पर चित्त को धारणा की अवस्था प्राप्त होती है तो पूर्ण एकचित्त होकर श्रद्धा एवं समर्पण से साधना करने पर समाधि अवस्था की भी अवश्यमय प्राप्ति हो सकती है। उच्च कोटी के कलाकारों के संबंध में सुर में 'खो जाने' की या 'डूब जाने' की बातें श्रुत है। यह 'खो जाना' या 'डूब जाना' शब्द समाधि का ही भाव प्रकट करता है।

मनुष्य जीवन सुख–दुख का सम्मिश्रण है। अतः जन्म से मृत्यु तक कलाकार इस सुख–दुख की संमिश्र अवस्थ में रहता है। कलाकार जब संगीत के माध्यम से अभिव्यक्त होता है तब उसे स्वयं का ही अविष्कार होता है और भाव–विभोर हो जाता है। अर्थात् कुछ समय के लिए ही सही वह स्वयं को भूल जाता है तब उसे आत्मानंद की प्राप्ति की अनुभूति मिलती है। इस प्रकार साधना करते–करते अपनी नित नये सृजन से कलाकार मनुष्य जीवन एवं उसके उद्देश्य को जानकर एक उच्च आनंदाभूति में विश्राम तथा शांति का अनुभव लेता है। आध्यात्मिक साधना से भी मनुष्य ऐसी ही शांति एवं आत्मानंद का अनुभव लेता है। इस प्रकार से संगीत के द्वारा परमात्मा से संबंध प्रस्थापित किया जा सकता है। संगीत के माध्यम से अपने आराध्य के साकार रूप में या निर्गुण निराकार

ब्रह्म में तादात्म्य प्रस्थापित करने वालों के कई उदाहरण इस भारतवर्ष में प्रमाण स्वरूप माने जाते हैं उनमें से कुछ संत–तुलसीदास, तुकाराम, कबीर, मीराबाई, गुरु नानक जिन्होंने अपनी भक्ति साधना से ही अध्यात्म ज्ञान प्राप्त किया।

हमारे भारतीय चिंतन धारा के अनुसार कोई भी विद्या या कला का उद्देश्य 'मुक्ति' है। अर्थात् संगीत जैसी महान कला की साधना केवल मनोरंजन नहीं परंतु आत्मरंजन की अनुभूति करती है। शास्त्रीय संगीत की पुरानी एवं परंपरागत रचनाएं है जिनमें बहुत–सी रचनाएं अध्यात्म के विषय से जुड़ी है। इनमें से कोई नाद से संबंधित है, किसी में मानव शरीर को गात्र वीणा मानकर कुंडलिनी शक्ति का वर्णन है तो किसी में सूक्ष्म शरीर की ग्रंथियों का वर्णन है। भातखंडेजी क्रमिक पुस्तिका से यह ज्ञात होता है कि ये रचनाएं मध्यकाल संतो की हैं। संगीत रत्नाकर में संगीत की महत्ता प्रकट करता हुआ तथा कुंडलिनी शक्ति एवं चक्रों से संबंधित श्लोक दिया है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अधिकारी पुरुषों के विचार तथा वाणी का अध्ययन करने के बाद शोधार्थी मानता है कि संगीत और अध्यात्म का परस्पर संबंध है। इतना ही नहीं बल्कि आध्यात्मिक उन्नति के लिए संगीत विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत के कई राग ऐसे हैं जिनके 'मूल स्वर' ही 'भक्तिमय' है। जैसे– तोड़ी, भैरव, ललत, भैरवी, चारूकेशी, परमेश्वरी आदि। इन सभी रागों से जनित फिल्म संगीत में भी भक्ति का भाव अनुभूत होता है। अर्थात् स्वयं राग (उसके परिसीमन के साथ) अर्थपूर्ण–भावपूर्ण शब्द तथा आत्मानंदी सुर इन तीनों का मिश्रण ही 'भक्ति संगीत' है, जिससे भक्ति की अनुभूति महसूस होती है।

इसके अलावा हमारे सभी आध्यात्मिक उन्नत संत (जिन्होंने संगीत के उपयोग से आत्मानंद की प्राप्ति की) उनके रचित दोहे, भजन या कोई भी भक्तिपूर्ण रचना, जो संगीत के शास्त्रीय पक्ष के सम्मत न भी हो, फिर भी उसे समर्पण भाव से गाने से परमानन्द की अनुभूति महसूस की जा सकती है। केवल भक्तिपूर्ण शब्द ही भक्ति की उत्कटता के लिए पर्याप्त नहीं है। उसमें भाव का होना अत्यंत आवश्यक है। यही योग है– शरीर और मन का और योग से ही आध्यात्म की शुरुआत होती है। धीरे–धीरे इसी में आत्मा के जुड़ने पर मनुष्य अपने अंतिम लक्ष्य का चयन कर सकता है। गान सरस्वती किशोरी अमोणकर ने अपने "स्वरार्थरमणी" नामक पुस्तक में लिखा है कि संगीत में अद्वितीय निर्मिती की अभिव्यक्ति होती है, स्वयं के अस्तित्व की भावना भी भूल जाते हैं, स्थलकाल से परे मन की अवस्था समाधिवत् हो जाती है और इस क्षण के आत्मानंद की स्मृति सदैव जागृत रहती है और हर वक्त वही अनुभूति का अनुभव कराती है।

पाद टिप्पणी

1) आचार्य, श्रीराम. शर्मा. शब्द ब्रह्म–नाद ब्रह्म. पृ. 3
2) चौबे, डॉ. सत्येन्द्र. कुमार. अनहद की झंकार. पृ. 73
3) मिश्रा, डॉ. नम्रता. संगीत तीर्थ मथुरा और काषी. पृ. 23
4) चौबे, डॉ. सत्येन्द्रकुमार. अनहद की झंकार. पृ. 37
5) चौबे, डॉ. सत्येन्द्रकुमार. अनहद की झंकार. पृ. 37
6) मिश्रा, डॉ. नम्रता. संगीत तीर्थ मथुरा काषी. पृ. 32
7) तुलसीदास, स्वामी. श्रीरामचरितमानस. गीत प्रेस, गोरखपुर.
8) पोतदार, वसंत. भीमसेन. पृ. 147

Swar Sindhu: National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music
ISSN 2320–7175 | Volume 09, Issue 01, June 2021
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021
UGC CARE listed Journal

सन्दर्भ

आचार्य, श्रीराम. शर्मा. और शर्मा, भगवती. देवी. (संवत् 2054). सामवेद संहिता. युगान्तर चेतन प्रेस, हरिद्वार.

आमोनकर, किशोरी. (2017). स्वरार्थमणी रागरस सिद्धांत. राजहंस प्रकाशन.

चिन्मयानंद, स्वामी. (2012). नारद भक्ति सूत्र. सेंट्रल चिन्मय ट्रस्ट.

तुलसीदास, स्वामी. (2013). श्रीरामचरितमानस. गीता प्रेस, गोरखपुर.

मुक्तानंद, स्वामी. (2011). चित्तशक्ति विलास. सिद्धयोग प्रकाशन मराठी आवृत्ति.

योगानन्द, परमहंस. (2005). योगी कथामृत. योगदा सत्संग सोसायटी ऑफ इंडिया–सेल्फ रियलाइजेशन फेलोशिप.

ISSN 0975-5217
UGC-Care list (Group-I)

भैरवी

(संगीत शोध-पत्रिका)

(वर्ष 2021 अंक 19)

मिथिलांचल संगीत परिषद्
स्नातकोत्तर संगीत एवं नाट्य विभाग
ललित कला संकाय
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय,
कामेश्वरनगर, दरभंगा 846 004

ऊँकार - सृष्टि का सर्वोच्च संगीत

श्रीमती स्मिता उदय कोल्हटकर

सार संक्षेप :

भारतीय विचारधारा के अनुसार इस परमात्म स्वरूप ऊँकार की उपासना को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। शास्त्रों के आधार पर ऊँकार यानि अकार, उकार, मकार तथा बिंदु इन साढ़े तीन मात्राओं से युक्त; सृष्टि व्यापी; सारे मंत्रो का अधिपति, भोग एवं मोक्ष दोनों की प्राप्ति कराने वाला परमशुद्ध नादचैतन्य।

ऊँकार साधना ही परम भक्ति है जिससे अंतिम लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है यह विचार प्रकट करने का शोधार्थी द्वारा कष्टसाध्य प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द : *ऊँकार, प्रणव, उपनिषद्, सगुण-निर्गुण, ब्रह्म।*

प्रस्तावना :

ऊँकार बिंदु संयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः।
कामदं मोक्षदं चैव ऊँकाराय नमो नमः।।

शिव षडक्षर स्तोत्र के श्लोकानुसार ऊँकार जो बिंदुसंयुक्त है, योगीजन उसका नित्य ध्यान करते हैं, इस लोक में जो भोग एवं मोक्ष का प्रदाता है उस ऊँकार को नमस्कार है। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों एवं तत्ववेत्ताओं के अनुसार ऊँ शक्ति, सामर्थ्य और ईश्वरीय संपदाओं का रूप है। ऊँ ही ब्रह्म बीज है जिसे धारण करने से दैवीय शक्ति का प्रादुर्भाव होकर मनुष्य अपने अंतिम लक्ष्य तक पहुंच सकता है। अतः ऊँकार की साधना से दैवीय शक्तियों के साथ मुक्ति का मार्ग भी सुगम बनता है। इसी ऊँकार के महात्म्य को शोधार्थी विस्तार से बताना चाहती है।

ऊँकार की सर्वव्यापकता का वर्णन करते हुए संतश्री ज्ञानेश्वर महाराज ने अपनी ज्ञानेश्वरी के प्रथम दोहे में कहा है कि -

ऊँ नमोजी आद्या। वेदप्रतिपाद्या।
जय जय स्वसंवेद्या। आत्मरूपा।।1

अर्थात् ऊँकार रूपी एक आदि बीज है जो आत्मचेतन होते हुए जो जानने योग्य है।

उसके आगे के श्लोक में श्री ज्ञानेश्वरजी लिखते हैं कि -

अकार चरणयुगुल। उकार उदर विशाल।
मकार महामंडल। मस्तकाकारें।।
हे तिन्ही एकवटले। तेथ शब्दब्रह्म कवळलें।
ते मियां श्री गुरूकृपा नमिलें। आदिबीज।।2

अर्थात् - संत ज्ञानेश्वर जी गणेश जी को ऊँकार का स्वरूप मानते हुए तीन मात्राओं के बारे में विस्तार से बताते हैं कि ऊँकार में रहने वाली प्रथम मात्रा 'अकार' की है तथा वो गणेश जी के दो पैर है। दूसरी 'उकार' की मात्रा उनका विशाल उदर है तथा तीसरी 'मकार' की मात्रा इनके बडे वृत्ताकार मस्तक के समान है। आगे की पंक्ति में ज्ञानेश्वर जी कहते हैं कि इन तीनों का जहाँ एक-दूसरे में मिलन होता है वहीं से इस विश्व का 'शब्दब्रह्म' आदिबीज 'ऊँकार' में से ही प्रकट होता है।

ऊँकार स्वयंभू होकर परमात्मा का शुद्ध स्वरूप है जिसमें से सृष्टि की उत्त्पत्ति हुई है। सृष्टि की

* शोध छात्रा : गायन विभाग फकेल्टी ऑफ परफोर्मिंग आर्ट्स, द महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी ऑफ बड़ौदा, वडोदरा, smitak1970@gmail.com] 99251 48715

सारी व्यवस्थाएँ उसी के उद्गम से आरंभ होती है और गतिशील रहती है। वेदांत के मुताबिक इस सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं लय सभी ऊँकार ही है। यह ऊँ साढ़े तीन अक्षरों से बना है - 'अ', 'उ', 'म' तथा अर्धबिन्दु। ऊँकार की तीन मात्राएँ - अकार, उकार एवं मकार अनुक्रम से जागृति, स्वप्न एवं सुषुप्ति अवस्थाओं के प्रतीक मानी जाती है। 'ऊँकार' की ध्वनि नाभि प्रदेश से आरंभ होकर उसका उच्चारण कंठ, होंठ, मुख से होता है तथा इसका बीज कुंडलीनी में निहित होता है।

अकार की मात्रा जागृति यानि हमारे तन की - श्वास-प्रश्वास की है। उकार की मात्रा स्वप्न अर्थात् मन से संबंधित एवं 'तेज' की है। तथा मकार की मात्रा आत्म तत्व की अर्थात् ज्ञान की है।

ऊँकार के अकार, उकार, मकार की मात्राओं की विशिष्टता की तालिका :[3]

विषय	**अकार**	**उकार**	**मकार**
देव	ब्रह्मा	विष्णु	महेश
स्थिति	जागृति	स्वप्न	सुषुप्ति
प्राणायाम	पूरक	कुंभक	श्रेचक
उच्चार	कंठय	ओष्ठय	ओष्ठय अनुनासिक
मात्रा	श्वास की	तेज की	ज्ञान की
मात्रा	देह की	मन की	आत्मा की
मात्रा	संसार	संसार	परमार्थ
मात्रा	प्रवृत्ति	प्रवृत्ति	निवृत्ति
मात्रा	उत्पत्ति	स्थिति	लय
मात्रा	शक्ति	शक्ति	शांति
पंचमहाभूत	वायु	अग्नि	आकाश

पंतजलि ऋषि अपने योगसूत्र में लिखते है कि-

'तस्य वाचकः प्रणवः।'[4]

अर्थात् - उस ईश्वर नामक चेतन तत्व के अस्तित्व का बोध कराने वाला शब्द ऊँकार यानि 'प्रणव' है।

माण्डूक्योपनिषद् में ऊँकार का वर्णन एवं उसकी सर्वात्मकता बतायी है। इसके पहले श्लोकानुसार -

ओमित्येतदक्षरमिद सर्व तस्योपव्याख्यानम भूतं
भव वित्त्यदिति सर्वमोङ्कार एव।
यच्चान्यत्रिकालातील तदप्योङकार एव।।[5]

अर्थात् - ऊँ यह अक्षर ही सबकुछ है। भूत, भविष्य एवम् वर्तमान भी सबकुछ ऊँकार रूप है। उसका यह व्याख्यान है। इससे भिन्न जो त्रिकालातीत तत्व है वही ऊँकार है।

मांडूक्य का दूसरा श्लोक -

सर्व ह्येतद् ब्रह्मायमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा चतुष्पाद्।।[6]

अर्थात् यह सबकुछ ब्रह्म है। यह आत्मा ब्रह्म ही है। वह आत्मा चतुष्पाद है।

यहाँ आत्मा को चतुष्पाद बताते हुए ऊँकार की साढ़े तीन मात्राओं से जोडा गया है। एक पाद अकार, दूसरा उकार, तीसरा मकार तथा बिंदु चौथा पाद है और यहीं चार पाद चार अवस्थाओं से संबंधित है।

कठोपनिषद् में यमराज भी नचिकेता को ऊँकार की महिमा बताते हुए कहते हैं कि - सकल वेद और संपूर्ण तपस्या में लक्ष्य रूप जिस पद का वर्णन है और जिस पद की इच्छा करके ब्रह्मचर्य का अवलंबन करते हैं उस पद का संक्षिप्त नाम ही 'ऊँ' है।

ऊँकार की महिमा का वर्णन करते हुए भगवद् गीता के आठवें अध्याय के 13 श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने लिखा है कि -

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।[7]

अर्थात् ऊँ इस एकाक्षर ब्रह्म का उच्चारण करते हुए मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिंतन करता हुआ जो पुरूष शरीर का त्याग करता है वह परमगति को प्राप्त होता है।

छांदोग्य उपनिषद के श्लोकानुसार -

'वागेव सा प्राणोऽमस्तत्साम।।[8]

अर्थात् सामगान का आधार भी ऊँकार ही है।

तैत्तरीय उपनिषद के श्लोकानुसार -

'ओमिति ब्रह्म। ओमितीद सर्वम्।
ओमित्येतदनुकृतिर्हस्म वा
अप्योश्रावयेत्याश्रावयन्ति।
ओमिति सामानि गायन्ति।
ऊँ शोमिति शस्त्राणि सन्ति।
ओमित्यध्वर्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति।
ओमिति प्रसौति।

ओमित्यग्निहोत्रमनुजानाति।
ओमिति ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह ब्रह्मोपाप्रवानीति।
ब्रह्मैवोपाप्रोति।।' [9]

ऊँ यह ब्रह्म है। ऊँ ही यह प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला सारा जगत है। ऊँ यह अक्षर निसंदेह ही अनुमोदन है। ऊँ शब्द का उच्चारण करके ही उपदेश का आरंभ किया जाता है। ऊँ बोलकर ही सामवेद के मन्त्र गाए जाते हैं। याज्ञिक लोग ऊँ, सोम ऐसा बोलकर यज्ञ साधनों की प्रशंसा करते हैं। ऊँ ऐसा बोलकर अध्वर्युः यजमान की बात का यज्ञ में उत्तर देता है। ऊँ बोलकर ही ब्रह्मा ईश्वर की स्तुति करते हैं अथवा याज्ञिक कर्म करने की आज्ञा देते हैं। ऊँ बोलकर ही अग्निहोत्र याज्ञिक कर्म करने की आज्ञा देता है। अध्ययन करने के लिए उद्यत ब्राह्मण की प्राप्ति की इच्छा से अध्ययन कार्य आरंभ करता है वह ब्रह्म को अवश्य ही प्राप्त कर लेता है।

'तैत्तरीय उपनिषद' के ब्रह्मानंदवल्ली में गान्धर्व (संगीत) द्वारा प्राप्त आनंद को ब्रह्मानंद के तुल्य कहा गया है तथा उससे निष्पन्न होने वाले रस को विशुद्ध एवं आनंदमय बताया गया है। 'बैजू' के एक ध्रुवपद में उन्होंने ' ऊँकार' की महिमा का गान इस प्रकार किया है -

प्रथम मनि ऊँकार, देवन मनि महादेव
ज्ञान मनि गोरख, वेद मनि ब्रह्म
गीत को संगीत मनि, संगीत को स्वर मनि
स्वर को अक्षर मनि ताल लगन्ता
कहत बैजू बावरे सुनहुँ गोपाल लाल
दिन मनि सूरज रैन मनि चंदा।

अर्थात् भारतीय आध्यात्म चिंतन मूल रूप से ऊँकार या प्रणव पर स्थित है। स्वामी विवेकानंद ने भी 'ऊँकार' को समस्त नाम पर रूपान्तरों की एक जननी कहा है। पाइथोगोरस ने 'ऊँकार' को सृष्टि कहा है। कोई भी स्तोत्र, स्तुति, वेद मंत्र का शक्ति जागरण ऊँकार के बिना जागृत नहीं होता। मंदिरो में बजने वाली शंख की ध्वनि ऊँकार के प्रतीक के रूप में बजायी जाती है। सप्त स्वर की उत्पत्ति भी ऊँकार को ही माना जाता है। अरविन्द कहते है - समस्त नाद का आदि तथा अंत प्रणव है जिसकी ओर साधक को बढ़ना है और अंत में उसी में लीन होना है।

ज्ञानेश्वरी के बाहरवें अध्याय के श्लोकानुसार-

तरी व्यक्त आणि अव्यक्त। हें तूंचि निभ्रांत।
भक्तीं पाविजे व्यक्त। अव्यक्त योगें।।[10]

अर्थात् इस विश्व में सभी व्यक्त एवं अव्यक्त (सगुण-निर्गुण) दोनों ही ऊँकार है। भक्ति से व्यक्त स्वरूप की तथा योग से अव्यक्त स्वरूप की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार से ऊँकार ही ईश्वर है, परमात्मा है और कभी भी क्षरित न होने वाला अक्षरब्रह्म है।

उपसंहार :

उपरोक्त सभी विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सगुण एवं निर्गुण ऊँकाररूपी नादचैतन्य के दो स्वरूप है। ऊँकार का वाचिक उच्चार सगुण रूप का द्योतक है तथा मकार के अंत में अतिसूक्ष्म होने वाला नाद, जो लय होकर शून्यतम हो जाता है वह निर्गुण निराकार का द्योतक है। हमारे शास्त्रानुसार भक्ति भी मूल रूप से दो प्रकार की सगुण एवं निर्गुण मानी गयी है और निरपेक्ष रहकर प्रेमपूर्वक किया गया आत्मसमर्पण ही भक्ति की पराकाष्ठा है। यही पराकाष्ठा संगीत के माध्यम से सुगम बनती है। अतः ऊँकार साधना भक्ति संगीत ही है। क्योंकि ऊँकार के उच्चारण में ही संगीत समाया हुआ है जिसका संबंध हमारे श्वास-प्रश्वास से भी है। अतः ऊँकार ही ऐसा सर्वोपरि भक्ति योग है जिसमें भक्ति मार्ग का अवलंबन करते हुए कर्म के माध्यम से मुक्ति की ओर कदम बढाते हैं। अतः केवल ऊँकार के उच्चारण में सगुण एवं निर्गुण साधना का अपूर्व संगम होते हुए भक्तियोग, कर्मयोग तथा ज्ञानयोग जैसे तीनों योगों का अपूर्व मिलन है। अर्थात् ऊँकार साधना सगुण से निर्गुण की ओर शब्द से निःशब्द की ओर, स्थूल से सूक्ष्म की ओर, व्यक्त से अव्यक्त की ओर, भक्ति से मुक्ति की ओर तथा नर से नारायण की ओर ले जाने वाली है। अतः ऊँकार के उच्चारण से संसार एवं परमार्थ अर्थात् भोग एवं मोक्ष दोनों की प्राप्ति हो सकती है। यही मनुष्य का परम लक्ष्य है तथा यही भक्ति का परम लक्ष्य है।

पाद टिप्पणी :

1) श्री ज्ञानेश्वरी/गीता प्रेस, गोरखपुर/1-1/पृ. 9
2) श्री ज्ञानेश्वरी/गीता प्रेस, गोरखपुर/1-2/पृ. 9
3) डॉ. जयन्त करंदीकर/ऊँ शक्ति शब्द स्वर साधना/पृ. 52
4) स्वामी रामदेव/योगदर्शन/पृ.18
5) मांडुक्य उपनिषद/गीता प्रेस, गोरखपुर/श्लोक-1
6) मांडुक्य उपनिषद/गीता प्रेस, गोरखपुर/श्लोक-2
7) श्रीमद् भगवत गीता/गीता प्रेस, गोरखपुर/8-73
8) छांदोग्य उपनिषद/गीता प्रेस, गोरखपुर/1-7-1
9) तैत्तरीय उपनिषद pdf /www.shdvef.com/प्रथम वल्ली-शिक्षावल्ली/ आठवां अनुवाक
10) श्री ज्ञानेश्वरी/गीता प्रेस, गोरखपुर/12-23

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :

1) पं. श्रीराम शर्मा आचार्य, भगवती देवी शर्मा/सामवेद संहिता/युगान्तर चेतन प्रेस, हरिद्वार/गुरू पूर्णिमा संवत् 2054.
2) स्वामी चिन्मयानंद/नारद भक्ति सूत्र/सेंट्रल चिन्मय ट्रस्ट/2012.
3) शान्ताराम आठवले/ऊँकार रहस्य /आनंद मुद्रणलय, पूणे/1996.
4) परमहंस योगानन्द/योगी कथामृत/योगदा सत्संग सोसायटी ओफ इंडिया- सेल्फ रियलाइझेशन फेलोशिप/मराठी आवृत्ति-2005.
5) स्वामी तुलसीदास/श्रीरामचरित मानस/गीता प्रेस, गोरखपुर/ओक्टोबर- 2013.
6) साक्षात्कार

ISSN 0975-5217

भैरवी (संगीत शोध पत्रिका)

अंक-19

अंक-19

ISSN 0975-5217

UGC-Care list (Group-I)

वर्ष 2021

भैरवी

संगीत शोध पत्रिका

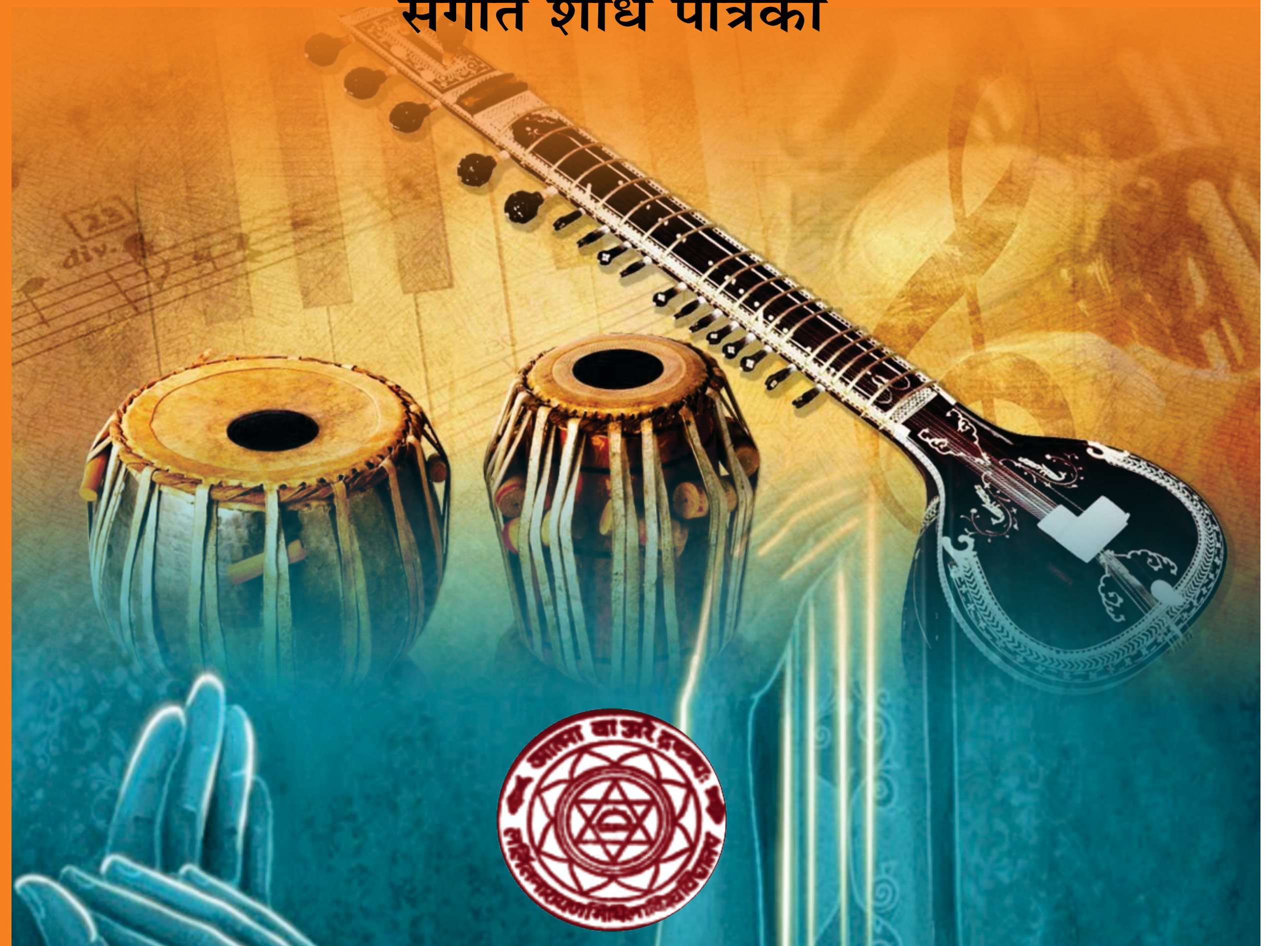

मिथिलांचल संगीत परिषद्

स्नातकोत्तर संगीत एवं नाट्य विभाग

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय

कामेश्वरनगर, दरभंगा (बिहार)